Vol II Issue IX

ISSN No : 2249-894X

Monthly Multidisciplinary Research Journal

Review Of Research Journal

Executive Editor
Ashok Yakkaldevi

Editor-in-chief
H.N.Jagtap

Welcome to Review Of Research

RNI MAHMUL/2011/38595 **ISSN No.2249-894X**

Review Of Research Journal is a multidisciplinary research journal, published monthly in English, Hindi & Marathi Language. All research papers submitted to the journal will be double - blind peer reviewed referred by members of the editorial Board readers will include investigator in universities, research institutes government and industry with research interest in the general subjects.

International Advisory Board

Flávio de São Pedro Filho
Federal University of Rondonia, Brazil

Kamani Perera
Regional Centre For Strategic Studies, Sri Lanka

Janaki Sinnasamy
Librarian, University of Malaya [Malaysia]

Romona Mihaila
Spiru Haret University, Romania

Delia Serbescu
Spiru Haret University, Bucharest, Romania

Anurag Misra
DBS College, Kanpur

Titus Pop

Mohammad Hailat
Dept. of Mathmatical Sciences, University of South Carolina Aiken, Aiken SC 29801

Abdullah Sabbagh
Engineering Studies, Sydney

Catalina Neculai
University of Coventry, UK

Ecaterina Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest

Loredana Bosca
Spiru Haret University, Romania

Fabricio Moraes de Almeida
Federal University of Rondonia, Brazil

George - Calin SERITAN
Postdoctoral Researcher

Hasan Baktir
English Language and Literature Department, Kayseri

Ghayoor Abbas Chotana
Department of Chemistry, Lahore University of Management Sciences [PK]

Anna Maria Constantinovici
AL. I. Cuza University, Romania

Horia Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest, Romania

Ilie Pintea,
Spiru Haret University, Romania

Xiaohua Yang
PhD, USA

Nawab Ali Khan
College of Business Administration

Editorial Board

Pratap Vyamktrao Naikwade
ASP College Devrukh,Ratnagiri,MS India

R. R. Patil
Head Geology Department Solapur University, Solapur

Rama Bhosale
Prin. and Jt. Director Higher Education, Panvel

Salve R. N.
Department of Sociology, Shivaji University, Kolhapur

Govind P. Shinde
Bharati Vidyapeeth School of Distance Education Center, Navi Mumbai

Chakane Sanjay Dnyaneshwar
Arts, Science & Commerce College, Indapur, Pune

Awadhesh Kumar Shirotriya
Secretary, Play India Play (Trust),Meerut

Iresh Swami
Ex - VC. Solapur University, Solapur

N.S. Dhaygude
Ex. Prin. Dayanand College, Solapur

Narendra Kadu
Jt. Director Higher Education, Pune

K. M. Bhandarkar
Praful Patel College of Education, Gondia

Sonal Singh
Vikram University, Ujjain

G. P. Patankar
S. D. M. Degree College, Honavar, Karnataka

Maj. S. Bakhtiar Choudhary
Director,Hyderabad AP India.

S.Parvathi Devi
Ph.D.-University of Allahabad

Sonal Singh

Rajendra Shendge
Director, B.C.U.D. Solapur University, Solapur

R. R. Yalikar
Director Managment Institute, Solapur

Umesh Rajderkar
Head Humanities & Social Science YCMOU, Nashik

S. R. Pandya
Head Education Dept. Mumbai University, Mumbai

Alka Darshan Shrivastava
Shaskiya Snatkottar Mahavidyalaya, Dhar

Rahul Shriram Sudke
Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore

S.KANNAN
Ph.D , Annamalai University,TN

Satish Kumar Kalhotra

Address:-Ashok Yakkaldevi 258/34, Raviwar Peth, Solapur - 413 005 Maharashtra, India
Cell : 9595 359 435, Ph No: 02172372010 Email: ayisrj@yahoo.in Website: www.isrj.net

Review Of Research
Vol.2, Issue.2, Nov. 2012
ISSN:-2249-894X
Available online at www.reviewofresearch.net

ORIGINAL ARTICLE

समकालीन : कविता के सशक्त हस्ताक्षर : कविवर नागार्जुन

सुनील कुमार, लवलीन कौर

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी–विभाग गुरु नानक देव विश्वविद्यालय अमृतसर।
जे॰आर॰एफ॰, हिन्दी–विभाग गुरु नानक देव विश्वविद्यालय अमृतसर।

सारांश :

कविता जीवन की कलात्मक अभिव्यक्ति मात्र ही नहीं अपितु समाज की संघर्षशील चेतना का सक्रिय रूप भी होती है। यह शांति के क्षणों में व्यक्ति–मन के उद्वेलित भावों का सहज उच्छलन है; जो विचार रूप में अभिभूत होकर निरंतर नवीनताओं का उद्भावन करती है। साहित्य के संदर्भ में ये एक कालावधि क्रम है, जिसमें प्रत्येक क्रम की अपनी अलग–अलग समस्याएँ, विशिष्टताएँ एवं मान्यताएँ हैं। हिन्दी साहित्य जगत में भी विभिन्न कालक्रमों में विलक्षण राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक इत्यादि प्रवृत्तियों के साक्ष्य में नये–नये काव्य–संकल्पों का जन्म होता रहा। कहना न होगा कि हिन्दी कविता की यह सरिता सतत् प्रवाहमान रही और इसी के दौरान स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1960 ई॰ में मानव जीवन की पूर्णरूपेण संघर्षशील गाथा को लेकर एक नवीन काव्यिक चेतना का आविर्भाव हुआ, जिसे 'समकालीन कविता' की संज्ञा दी गई।

प्रस्तावना :

समकालीन कविता, जिसे 'सठोत्तरी कविता', 'अकविता', 'बीट कविता', 'अभिनव कविता', 'सहज कविता', 'अस्वीकृत कविता' इत्यादि कई नामों से जाना जाता है, युगीन सच से साक्षात्कार करने वाली कविता है। ये तद्युगीन अंतर्विरोधों, द्वन्द्वों व संघर्षों का सक्रिय रूप में पर्दापण कर सही मायनों में एक स्वतंत्र समाज की परिकल्पना करती है। डॉ॰ शर्मीला सक्सेना के शब्दों में–

"समकालीन कविता 'परम्परा की सड़ाँध' के खिलाफ
सभ्यता की बदबू के खिलाफ। संस्कृति की 'बदहजमी' के खिलाफ।
शाब्दिक 'दगाबाजी' के खिलाफ। ऐतिहासिक 'अत्याचार' के खिलाफ।
'चिरंतन' अन्याय के खिलाफ। 'धार्मिक कैंसर' के खिलाफ।
यह एक विद्रोह है। यह एक बगावत है।
यह एक सैलाब है।"

उपर्युक्त सभी विरोधों में, विद्रोहों में, बगावतों में कवि नयी सर्जना के स्वर खोलता है।

समकालीन कविता के प्रादुर्भाव में वो सभी सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं धार्मिक कारण कार्यरत हैं, जिनसे समाज में भिन्न–भिन्न स्तरों पर विसंगतियाँ, विघटन, मूल्यविहीनता, शोषण इत्यादि का उद्भव हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी जब स्वराज्य, रामराज्य में परिणित न हो पाया तो सामान्य जन में मोहभंग की स्थिति पैदा हो गई। फलतः वे तनावों से भरा दबावपूर्ण जीवन जीने लगा क्योंकि उसका शोषण होने लगा था। ऐसे में 'मानव–मुक्ति' का स्वर लेकर कवियों की कलम उठी। "भरसक प्रयासों के बाद भी जब स्वराज्य को आदर्श रामराज्य में परिणत न किया जा सका तो जनमानस में मोहभंग की स्थिति पैदा हो गई। जीवन के इस कटू यथार्थ का सामना करने में उसे जिन दबावों – तनावों को झेलना पड़ा है, जिन–जिन आरोहों – अवरोहों, संकल्पों – विकल्पों में से गुज़रना पड़ा है।, उसकी स्पष्ट छाप हमें समकालीन हिन्दी कविता में दिखाई पड़ती है।" अतएव समकालीन कविता का मूल स्वर मानव–मुक्ति का है और मानव की इस मुक्ति का बिगुल बजाने वाले प्रमुख कवि हैं– कविवर नागार्जुन, धूमिल, त्रिलोचन, केदारनाथ सिंह, रघुवीर सहाय, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, लीलाधर जगूड़ी, मुक्तिबोध, शमशेर बहादुर सिंह इत्यादि।

समकालीन कविता परम्परित मूल्यों – मान्यताओं के विरोध की कविता है। इसमें यथार्थ का बोध है। राजनीति, समाज, धर्म, संस्कृति, अर्थ आदि सभी का जटिल–क्रूर भावावेश में समावेश है। इसमें राजनीति से लेकर राजनेता तक, जन–सामान्य से लेकर उच्च–वर्गों तक, आर्थिक विषमताओं से लेकर धार्मिक पाखण्डों – आडम्बरों तक, सांस्कृतिक विधि–विधानों से लेकर सभ्यता इत्यादि तक प्रत्येक की परिभाषा आम आदमी के मुक्त–स्वस्थ जीवन के संदर्भ में परिवर्तित होती है। समग्र रूप में डॉ॰ ओमप्रकाश सठोतरी कविता को वैशिष्ट्यगत रूप में इस प्रकार विख्यायित करते हैं– "सठोत्तरी कविता से तात्पर्य 1960 ई॰ के बाद उस युवा काव्यचेतना से है, जिसमें वर्त्तमान समाज के अमानवीय, चरित्रहीन, आचरणभ्रष्ट, छद्य आदर्शों और काल्पनिक सत्यान्वेषियों के प्रति विद्रोह है तथा स्वस्थ चरित्र मानववादी, कल्याणधर्मी, सत्य यर्था की स्थापना की तटस्थता भी है। यथार्थ के यथार्थ का उद्घाटन, कुत्सित समाज की निंदा, छद्य राजनीति की अवमानना, अमानवीय मूल्यों का

तिरस्कार इनके काव्य की विषय–सामग्री है तथा व्यंग्य की मानसिक संरचना में वक्रोक्ति की स्वभाविक मुद्रा भी है तो आक्रोश का स्वर भी है।" अतः समकालीन कविता मानवीय सरोकारों से जुड़ी जीवनानुभूति है।

समकालीन कविता के ख्याति प्राप्त कवियों में कविवर नागार्जुन का नाम सर्वोपरि लिया जाता है। इनकी कविता बहुरंगी भाव–धवियों को उद्घाटित करती है लेकिन उसके मूल में भी एकमात्र सुखद मानव–जीवन की कामना है। प्रगतिशील काव्यांदोलन से लेकर समकालीन कविता के दौर तक वे केंद्र में रहे। इनका जन्म 1911 ई॰ में बिहार प्रदेश के दरभंगा जिले के 'तरौनी' नामक ग्राम में हुआ माना जाता है। पिता 'श्री गोकुल मिश्र' और माता 'श्रीमती उमादेवी मिश्र' थी। इनका बचपन का नाम (या कह सकते है कि असली नाम) 'वैद्यनाथ मिश्र' था। अन्य सब नाम जैसे 'ठक्कन', 'यात्री', 'नागार्जुन' इत्यादि या तो किसी विशेष ख्याति के द्योतक हैं या फिर उनके पीछे कोई विशिष्ट कारण कार्यरत है। साहित्य संसार में इन्हें बड़े अदब से 'बाबा' भी कहा जाता है। इनकी शिक्षा–दीक्षा की अगर बात करें तो इन्होंने पूर्व–नियोजित ढंग से किसी स्कूल, कॉलेज या विश्वविद्यालय में जाकर शिक्षा ग्रहण नहीं की अपितु जिंदगी की विस्तृत पाठशाला में जो भी देखा–सुना व परखा, उसी से ज्ञानार्जन किया और अपनी लेखनी में उतारा। डॉ॰ प्रभाकर माचवे के कथनानुसार– "जिंदगी की खुली पुस्तक से कबीर की तरह "आँख की देखी" सीखा और वही ईमानदारी से लिखा। यह महाप्राण 'निराला' की भी परम्परा थी–उनकी कविता में "मैने देखा" अनेक बार आता है। 'देखा उसे इलाहाबाद के पथ पर' (तोड़ती पत्थर), "देखा" तुलसीदास काव्य में और 'राम की शक्ति पूजा' में भी आता है। चाक्षुष प्रत्यक्ष 'कबीर', 'निराला' नागार्जुन की कविता की ठोस यथार्थवादी ज़मीन है।" इस तरह बाबा का स्वयं का जीवन अभावों का जीवन था।

हिन्दी साहित्य जगत् में इनका अवतरण 1935 ई॰ में 'राम के प्रति' नामक कविता से हुआ। वे एक बहु–विधायक साहित्यकार थे कविता, उपन्यास, निबंध, कहानी, यात्रा–प्रसंग, संस्मरण इत्यादि प्रत्येक विधा को इनकी मसि ने छुआ और कलम ने उल्लेखन किया है। लेकिन मुख्यतः बाबा एक कवि ही थे। इन्होंने 20 काव्य संकलनों (13 हिन्दी में, 4 संस्कृत में, 2 मैथिली में, 1 बंगला में) की रचना की है। इसके अतिरिक्त इनका कुछ फुटकल काव्य भी मिलता है।

इसी तरह बाबा के गद्य साहित्य की बात करें तो उसमें 13 उपन्यास, 4 कहानी–संग्रह, 4 निबंध और 4 बाल–साहित्यिक रचनायें मिलती है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त नागार्जुन ने अन्य साहित्यिक विधाओं जैसे लघु–प्रबंध, यात्रा–प्रसंग, संस्मरण का सृजन भी बड़े बेबाक से किया है। अपनी बहुमुखी साहित्यिक प्रवृत्ति के कारण कविवर को कई पुरस्कार भी प्राप्त हुए हैं जैसे 'पत्रहीन नग्न–गाछ' काव्य–संकलन के लिए भारत सरकार की 'साहित्य अकादमी' की ओर से 1969 ई॰ में पुरस्कार मिला। इसी तरह 18 मार्च 1983 ई॰ में तत्कालीन प्रधानमंत्री 'श्रीमती इंदिरा गांधी के हाथों 15 हज़ार रूपये का विशेष सम्मान और प्रशस्ति पत्र प्राप्त किया।समकालीन कविता के परिप्रेक्ष्य में कविवर नागार्जुन

कविवर नागार्जुन समकालीन कविता के ख्याति प्राप्त कवियों में एक हैं। समकालीन कविता के युगोन संदर्भो के आशय में जन–मुक्ति व स्वतंत्र जनाभिव्यक्ति की अवधारणा कविवर नागार्जुन के काव्य में प्रत्यक्षतः परिलक्षित होती है। शिवकुमार मिश्र के शब्दों में– "नागार्जुन की कविता बहुरंगी भाव–छवियों की कविता है। कवि ने अपनी संवेदना को किन्हीं बंधी–बंधाई लीकों में अभिव्यक्ति न देकर उसे जीवन की समग्रता का व्यापक संदर्भ प्रदान किया है। वह मुक्त प्रकृति की कविता है जो जीवन की संकरी और प्रशस्त, समस्त गलियों और राजपथों में स्वेच्छापूर्वक विचरण करती है और इस क्रम में उसकी ओर जीने वाले मनुष्य की वैयक्तिक और सामाजिक, सभी प्रकार की आकृतियों को पहचानते हुए चलती है।" इस प्रकार कहना न होगा कि कविवर नागार्जुन समकालीन कविता में सिद्धहस्त कवि हैं। उनकी इस सिद्धि का प्रमाण समकालीन कविता के परिप्रेक्ष्य में उनके काव्य की कतिपय विशेषताओं का मूल्यांकन कर करेंगे, जो निम्नानुसार है–

1.युगीन विषमताओं की अभिव्यंजना

समकालीन कविता युगीन परिस्थितियों, प्रवृत्तियों का दस्तावेज़ है। तत्कालीन विषमताओं, विद्रूपताओं का इसमें खुली आँख से निरूपण हुआ है। युग के घिनौनेपन, कुत्सितत्व एवं अश्लीलता की बेबाक अभिव्यक्ति इसमें है। शोषित–पीड़ित, दबे–कुचले व निरीह–बेसहारा लोगों की कथा–व्यथा अथवा नारकीय सामाजिक व्यवस्थाओं इत्यादि सबका अंकन नागार्जुन की कविताओं में हुआ है। डॉ॰ हरिचरण शर्मा के कथनानुसार– "समूचे भारत के दुःख–दर्द, शंका–कुशंका पीड़ा छटपटाहट, दुःख–दैन्य, ग्रामीण व नागरीय जीवन की विषमताओं, मज़दूरों की विषमता और अभावों में पल रही जिंदगी, नगरीय परिवेश में व्याप्त अपराधी, स्वार्थपरता, यांत्रिकता और शोषण तथा पूँजीपतियों के अत्याचार व उत्पीड़न की कथाओं के सहारे विकसित व्यथा–प्रसंगों की मुँह बोलती तस्वीर नागार्जुन की कविताओं में कैद है।" सही मायनों में कवि ने स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के भारत की उस दुर्दशा को प्रस्तुत किया है, जिसमें भुखमरी, अकाल, बाढ़, महामारी, मँहगाई और बेरोज़गारी का दैत्य जन–सामान्य को निगल रहा है। स्वयं कवि के शब्दों में–

"कहीं बाढ़, भुचाल कहीं पर, कहीं अकाल कहीं बीमारी।
मँहगाई की क्या नज़ीर दूँ, मानो द्रुपद सत्ता की सारी।
भूखो मरो चबाओं पत्ती, मगर अन्न का नाम न लेना।
कहीं न तुम भी पकड़े जाओं, कहीं सफाई पड़े न देना।"
(सात नवम्बर, 'नागार्जुन रचनावली–1', पृ॰–191)

इस तरह 'देखना ओ गंगा मईया', 'खुरदरे पैर', 'मँहगाई की लीला' इत्यादि कविताओं में भी युगीन परिवेश का यथार्थक चित्रण हुआ है।

वर्त्तमान की अगर बात करें तो आधुनिकता और उत्तर – आधुनिकता के इस युग में यहाँ चारों तरफ मशीनीकरण हो रहा है, साक्षरता की दर बढ़ रही है, विज्ञान में नित्य नये चमत्कार हो रहे हैं, वहाँ मानव जीवन उपर्युक्त सभी पीड़ाओं को अभी भी झेल रहा है। हमारा युगीन संदर्भ ऊपरी स्तर पर भरापूरा–सक्षम है लेकिन अंदर से खोखला है। अज़ादी के 65 वर्षो बाद आज भी भूख से तड़पते, भीख माँगते बच्चों व औरतों को सड़कों पर देखते हैं। मँहगाई की बढ़ती दरें और बेरोज़गारी का चोटी पर बजता डंका आधुनिक मानव के त्रस्द जीवन की व्यथा का चिट्ठा है। अतः कह सकते हैं कि बाबा ने सीधे–सरल व सपाट शब्दों में सघन प्रभावकारी बातें कर युग की सच्ची तस्वीर पेश की है।

2. जीवन का वास्तविक निरूपण

समकालीन कविता जीवन की वास्तविकताओं का मर्मस्पर्शी निरूपण करती है। सामान्य जन के कुंठित–दुःखद जीवन से लेकर सत्ताधारी के सुखद–खुशहाल जीवन का चित्रांकन इस कविता में हुआ है। बाबा का कवि संकल्प भी हर प्रकार के खतरे को मोल लेकर आम आदमी के हक की बात करता है। स्वतंत्र भारत में सामान्य जन का जीवन सच्च में क्या हैं, को इन्होंने गरीब किसानों, रिक्शाचालकों और मज़दूरों के जीवन की झांकी प्रस्तुत कर उभारा है–

"भूखे रहकर आधा खाकर दिन पर दिन दुबराते हैं
हड्डी छेद रहा है जाड़ा बरबस दाँत बजाते हैं
दवा न कर पाते रोगों की यम को पास बुलाते हैं
हरि इच्छा या राम भरोसे अपने
.....
.....
को समझाते हैं
चाँदी तक क्या टहला तक की औंठी नहीं गढ़ाते हैं
परब तीज–त्योहार नहीं तंगी के कारण भाते हैं।"
(पूरी आज़ादी का संकल्प, 'नागार्जुन रचनावाली–1', पृ॰–230)

वास्तव में हमारे देश का आधे से अधिक जीवन ऐसा ही है। इसी तरह एक उच्च वर्गीय जमींदार, साहूकार के जीवन की लीला भी इस प्रकार प्रकट की है–

"जमींदार है, साहूकार है, बनिया है, व्योपारी है,
अन्दर अन्दर विकट कसाई, बाहर खद्दरधारी है
(सच न बोलना, 'नागार्जुन रचनावली–1', पृ॰–105)

इसी प्रकार आगे वो कहते है–

माताओं पर बहनों पर, घोड़, दौड़ाये जाते हैं
बच्चे, बूढ़े–बाप तक न छूटते, सताए जाते है
मार–पीट है, लूट–पाट है तहस–नहस बरबादी है
जोर जुलुम है, जेल–सेल है, बाह खूब आज़ादी है।"
(वही, पृ॰–106)

20वीं शती के आम आदमी ने जो कुछ झेला या झेल रहा है, को बड़े स्पष्ट शब्दों में बाबा ने उल्लेखित किया है।

हालात आज भी कुछ ऐसे ही हैं। किसान, मज़दूर, कुली, रिक्शाचालक आज भी पेट भर खाने को दुबराते हैं। पूरे भारतवर्ष का अन्न–भण्डार कहलवाने वाले पंजाब प्रांत के अन्नदाता अर्थात कृषकों का आज भी जमींदरों – साहूकारों के हाथों जो हाल है, वो बाबा की कविताओं में साक्षात विद्यमान है।

3.वर्तमान व्यवस्था के प्रति आक्रोश व विद्रोह

'व्यवस्था' शब्द में समूचा राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक इत्यादि परिवेश समाहित है। समकालीन कविता में तत्कालीन अव्यवस्थित व्यवस्था के प्रति तीव्र आक्रोश व असंतोष दिखाई पड़ता है। यहाँ तक कविवर नागार्जुन की कविता के पटल की बात है वो तो उदित ही विद्रोहों और आक्रोशों से होती है। चूँकि वे मानवतावादी कवि है, इसलिए उन सब व्यवस्थाओं का कटु शब्दों में विरोध करते हैं। वर्त्तमान संदर्भो को वे केवल देख–सुनकर चुप नहीं बैठ जाते अपितु उसके प्रति तीखी आवाज़ भी उठाते हैं। जैसे 26 जनवरी एवं 15 अगस्त जैसे देश के महान पर्वो को भी कवि ने अपनी आक्रोशित वाणी में ब्यान किया है–

"किसकी है जनवरी, किसका अगस्त है?
कौन यहाँ सुखी है, कौन यहाँ मस्त हैं?
सेठ है, शोषक है, नामी गला–काटू है
गालियाँ भी सुनता है, भारी थूक–चाटू है
चोर है, डाकू है, झूठा मक्कार है
कातिल है, छलिया है, लुच्चा–लावार है
जैसे भी टिकट मिला
जहाँ भी टिकट मिला
शासन के घोड़े पर वो ही सवार है
उसी की जनवरी छब्बीस
उसी का पंद्रह अगस्त है
बाकी सब दुखी है, बाकी सब पस्त है।"
(26 जनवरी, 15 अगस्त, 'तुमने कहा था', पृ॰–80)

चुँकि कवि को पता है कि इस भ्रष्ट–व्यवस्था का एक मात्र उपाय जनक्रांति है, इसलिए जन–सामान्य को इस व्यवस्था के खिलाफ दिल्ली जाकर धरना देने के लिए प्रेरित करते हैं–

"चलो–चलो, धरना दें चलकर दिल्ली के दरबार में
ऊब–डूब करते हैं बुद्ध नाहक ही मझधार में
अपनी बहन बनी है मलका, जस फैला संसार में
कागज का रूपया रोवे या लगे आग बाजार में
चलो–चलो धरना दें चलकर दिल्ली के दरबार में।"
(चलों–चलों धरना दें चलकर, 'पुरानी जूतियों का कोरस', पृ॰–60)

कहना न होगा कि बाबा वर्त्तमान व्यवस्था का निर्भय होकर विरोध करते हैं। इस स्पष्टवादी, कटु–कठोर कवि के हृदय में सत्ताधारी एवं शासक के प्रति जितना आक्रोश है, शोषित – असहाय के प्रति उतना ही प्रेम और सहानुभूति भी है। इसी प्रेम के कारण तो इन्होंने बड़ी–से–बड़ी सत्ता से सीधे टक्कर ली है। अतएव नागार्जुन का विद्रोह किसी एक व्यक्ति या व्यवस्था के लिए नहीं अपितु वे तो उस सारे परिवेश के विरूद्ध हैं, जिसमें मानवता का दम घुट रहा है। अप्रत्यक्ष रूप में कह सकते हैं कि उसे साँस लेने की भी आज्ञा लेनी पड़ती है।

4.राजनेताओं के प्रति विक्षोभ

राजनीति सभी व्यवस्थाओं की परिचालक है। समकालीन कविता राजनीति एवं राजनेताओं के प्रति विक्षोभ की कविता है। देश की हासोन्मुख भ्रष्ट स्थिति के लिए राजनेताओं को जिम्मेदार ठहराती है। बाबा की काव्यिक संवेदना में राजनीति व राजनेता गंदगी के रेंगते कीड़ों से कम नहीं, जो चारों ओर सड़न और बीमारियाँ उत्पन्न करते हैं। वे कहते हैं–

"राजनीति क्या है?विष्ठा है, मल है!
दिखाने के और दाँत, खाने के और.....
आप तो अमलेंदु जी ठहरे खैर समाज के सिरमौर
जातिवाद डंडा है, राजनीति मथनी
करनी अलग है, अलग है कथनी।"
(अमलंदु एम॰एल॰ए, 'पुरानी जूतियों का कोरस', पृ॰–47)

राजनीति नागार्जुन की कविता की रीढ़ है। राजनीतिक व्यवथाओं, विद्रूपताओं और राजनीतिज्ञों पर उन्होंने कड़ा प्रहार किया है। डॉ॰ रतन कुमार पाण्डेय के शब्दों में– "नागार्जुन ने समाज के निर्माण में अर्थ–चक्र प्रपीड़ित जन जीवन की जिन बारीकियों से पहिचान की है, वही सूक्ष्मतर दृष्टि राजनीतिक कुचकों का भी निरीक्षण करती है। इन अभेद्य छद्म चक्रव्यूहों से जन–जीवन क्षुब्ध है। समाज के नारकीय जीवन में राजनीति भी उतनी ही भूमिका निभा रही है जितने की पूँजीपतियों के कारनामे...। देश की राजनीतिज्ञ और प्रशासन में कुर्सियों पर जम्हाई लेती नौकरशाही दोनों इस विघटन के प्रमुख अंग हैं।"

आज राजनीति कालनीति बन गई है। रक्षक, भक्षक बन गये हैं। लोकतंत्र के नाम पर आज का प्रशासन एक काला धब्बा है। कुर्सी की आड़ में राजनीतिज्ञ अपना धर्म–ईमान सब बेच रहे है। भाई–भतीजावाद, भ्रष्टाचार, अफसरशाही, लालफीताशाही इत्यादि सब समाज को दीमक की तरह चाट रहे है। 'प्रजातंत्र का होम' कविता में कवि ने इन्हीं क्रूर प्रवृत्तियों को प्रस्तुत किया है–

"सामंतो ने कर दिया प्रजातंत्र का होम
लाश बेचने लग गए खादी पहने डोम
खादी पहने डोम लग गए लाश बेचने
माइक गरजे, लगे जादुई ताश बेचने
प्रजातंत्र का होम कर दिया सामंतों ने।"
(प्रजातंत्र का होम, 'तुमने कहा था', पृ॰–55)

अतः कह सकते हैं कि लाठी–गोली की सरकार के घिनौने रूप, गुटबंदी, जातिवाद, पंचशील की छाया में पलने वाली नादिरशाही इत्यादि सब बाबा की राजनीतिक चेतना के समवाहक हैं। 'शपथ', 'कांग्रेसजन तो तेणे कहिए..', 'अमलेंदु एम॰एल॰ए', 'पुलिस अफसर', 'अब तो बंद करो हे देवि! यह चुनाव का प्रहसन', 'इंदु जी क्या हुआ आपको', '26 जनवरी, 15 अगस्त', 'जपा कर', इत्यादि राजनीतिक व्यवस्था की कुत्रिमता और राजनीतिज्ञों के कारनामों को प्रदर्शित करने वाली कविताएँ हैं।

5.मोहभंग की स्थिति

छठे दशक की कविता पूर्णतः मोहभंग की कविता है। भ्रष्ट शासन व्यवस्था, बढ़ते देशी– विदेशी ऋण, पूंजीवाद, भुखमरी, मंहगाई, बेरोजगारी, कालाबाजारी आदि समस्याओं ने व्यक्ति के मन में मोहभंग की स्थिति उत्पन्न कर दी है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जब स्वराज्य रामराज्य में परिणत न हो पाया तो जन–सामान्य के मन में मोहभंग की स्थिति उत्पन्न हो गई। इस स्वराज्य के प्रति बाबा के मन में तीव्र आक्रोश था क्योंकि उनका 'व्यक्ति' इससे त्रस्त था। व्यवस्थाओं की उत्थल–पुत्थल, जिनके फलस्वरूप दिन–ब–दिन मँहगाई, गरीबी, बेरोज़गारी से आम आदमी के मन में जीवन स्तरीय मानदण्डों का हास हो गया है, बाबा की कविता में इन सबका वर्णन बड़े पैमाने पर दिया गया है। एक तरफ अगर वो विकृत व्यवस्था की इन सब कुरीतियों को उभारते हैं तो दूसरी तरफ वे इन सबका सामान्य जीवन–प्रक्रिया के संदर्भ में मूल्यांकन कर इनसे गिर रहे मानवीय मानदण्डों को भी वाणी देते हैं। यथा–

"हम, मँहगाई के मारे हुए लोग
हम, गैर–बराबरी के सताए हुए लोग
हम, अंधाधुंध दमन के शिकार लोग
हम, बेरोजगार और जाहिल लोग
हम, सनातन भाग्यदारी और काहिल लोग
तुम्हारे आगे हमें डर लगता है।"
(शांति–मैत्री, 'आखिर ऐसा क्या कह दिया मैंने', पृ॰–50)

आधुनिक मानव भयजनक रात्रि में जी रहा है। यहाँ रंग–बिरंगी लाईटों की लौ तो है लेकिन किसी नये सूर्य के उदित होने की आशा नहीं है। बड़ी पूँजी और सत्ता की मिली–भगत से जन–साधारण के जीवन में दबी–दबी, सहकती–सहकती सी तूफानी हवायें चलती रहती हैं। "सत्ता और बड़ी पूँजी का गठबंधन यहाँ इतने विकट रूप में होता है कि साधारण जन के मानसिक जगत् को भी व्यवस्था रंजित कर दिया जाता है।" जैसे 'प्रेत का बयान' कविता में कुटिल पूँजीवादी नीतियों के शिकार एक व्यक्ति (जो अब मर चुका है) को प्रेत की संज्ञा देकर उसकी दर्दभरी दास्तान को इस प्रकार सुनाया है–

"नाना प्रकार की व्याधियाँ हों भारत में
किंतु–
उठाकर दोनों बाँह
किट–किट करने लगा ज़ोरो से प्रेत
–किंतु
भूख या क्षुधा नाम हो जिसका
ऐसी किसी व्याधि का पता नहीं हमको
सावधान महाराज
नाम नहीं लीजिएगा
हमारे समक्ष फिर कभी भूख का।"
(प्रेत का बयान, 'युगधारा', पृ॰–89)

आज मेहनत का कोई मोल नहीं है, ईमानदारी का कोई तोल नहीं है और सच्चाई का कोई सबूत नहीं है। इसलिए ऐसे समाज के व्यक्ति का विमोही होना, ज़ाहिर सी बात है। जैसे 'बेकार' कविता में बाबा ने एक पढ़े–लिखे नौजवान की बेरोज़गारी और नौकरी पाने की तीव्र इच्छा को इस प्रकार जुबां दी है–

"मानव होकर मानव के ही चरणों में मैं रोया।
दिन बागों में बिता रात को पटरी पर मैं सोया!
राजकीय ये उच्च डिग्रियाँ, ऐसा सुंदर मुखड़ा!
तो भी नहीं किसी ने सुनना चाहा मेरा दुखड़ा!
कभी घुमक्कड़ यार–दोस्त से मिलकर कभी अकेले
एक–एक दाने की खातिर सौ–सौ पापड़ बेले।"
(बेकार, 'नागार्जुन रचनावली–1', पृ॰–21)

अत्एव कहना न होगा कि विषम युगीन संदर्भो में व्यक्ति मन में उत्पन्न हो रही मोहभंग की स्थिति कविवर नागार्जुन की कविताओं में स्पष्ट देखने को मिलती है।

6.व्यक्ति ओर सामान्य सत्ता की प्रतिष्ठा

60 के बाद की कविता का मूल स्वर 'व्यक्ति' ही रहा है। उसका जीवन कैसा हो, समाान्य स्तर पर क्या–क्या मुशिकलें उसके जीवन में आ रही हैं और उनको दूर कैसे किया जाये, कैसा हमारा राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक ढाँचा हो कि हमारा जन–साधारण चैन की साँस ले सके इत्यादि सब 'व्यक्ति के खुशहाल जीवन' से ही जुड़े हैं। दूसरी तरफ सत्ता है, उसे नकारा नहीं जा सकता। अतः दोनों की समान प्रतिष्ठा होनी चाहिए। इस संदर्भ को कविवर नागार्जुन ने जन–क्रांति के आवरण में लपेटकर प्रस्तुत किया है। कवि को मालूम है कि 'जन–क्रांति' ही इस राजनीतिक व्यवस्था के घेरे में जन की हालत सुधार सकती है। इसलिए उन्होंने जन–सामान्य को इन उच्चवर्गीय सत्ताधारियों के विरूद्ध खड़ा होने को कहा है–

"एक–एक को गोली मारो
जी हाँ, जी हाँ, जी हाँ, जी हाँ...
.....
.....
पतित बुद्धिजीवी जमात में आग लगा दो
यों तो इनकी लाशों को कुछ गीध छुएँगे
गलित कुष्ठवाली काया को
कुत्ते भी तो सूँघ–सूँघकर दूर हटेंगे।"
(संग तुम्हारे, साथ तुम्हारे, 'आखिर ऐसा क्या कह दिया मैंने', पृ॰–13)

राजनीति, समाज, संस्कृति, कोई भी क्रांति–भ्रांति, कोई भी व्यवस्था जन–साधारण के बिना नहीं चल सकती। "साधारणजन की उपेक्षा करके न तो राजनीति कही जा सकती और न कविता।" अतः कह सकते हैं कि समकालीन कविता की आम आदमी और राजनीतिक सत्ता को सामान्य प्रतिष्ठा दिलवाने की प्रवृत्ति बाबा की कविताओं में एक बड़े स्तर पर उद्‌भूत हुई है।

7.परम्परागत मूल्यों – मान्यताओं का विघटन

मूल्य–मान्यताएँ जीवन का धरोहर होती हैं। ये परिवर्तनशील हैं लेकिन इनका परित्याग नहीं जा सकता। साठ के दशक के बाद जो जन–सामान्य में तत्कालीन व्यवस्थाओं के कारण मोहभंग की स्थिति उत्पन्न हुई, उस स्थिति ने व्यक्ति में परम्परागत मूल्य प्रणाली के प्रति नकारात्मक भाव उत्पन्न कर दिया। आधुनिकता और विज्ञान की महती उपलब्धियों ने इन्सान को इतना समर्थ और शक्तिसम्पन्न बना दिया कि वह स्वयं को सर्वशक्तिसम्पन्न समझने लगा। धर्म, दर्शन, अध्यात्म से विमुख हो गया। बाबा की कविताओं में भी मूल्य–मान्यताओं का विघटित रूप देखने को मिलता है। डॉ॰ बादाम सिंह रावत के शब्दों में– "संयुक्त परिवार का विघटन, बढ़ती हुई आर्थिक असमानता, राजनीतिक अस्थिरता और सांस्कृतिक अवमूल्यन के फलस्वरूप इस युग में पहले से स्वीकृत जीवन–मूल्यों के प्रति प्रारम्भ में सन्देह व्यक्त किया गया तदुपरान्त उन्हें अनुपयोगी पाकर बिल्कुल नकार दिया गया।" 'कल्पना के पुत्र हे भगवान' नामक कविता में उन्होंने आधुनिक मानव की स्व–शक्ति पर अटूट विश्वास की प्रवृत्ति को प्रस्तुत किया है–

"खोलकर बंधन, मिटाकर नियति के आलेख

लिया मैंने मुक्तिपथ को देख
नदी कर ली पार, उसके बाद
नाव को लेता चलूँ मैं क्यों पीठ पर लाद।"
(कल्पना के पुत्र हे भगवान, 'नागार्जुन रचनावली–1', पृ॰–75)

उपर्युक्त में मानव की उस मनोभावना का चित्रांकन है; जिसमें वो नियति अर्थात् कुदरत के खिलाफ जाकर अपनी मुक्ति का रास्ता ढूँढ चुका है। लेकिन ये गलत बात है। हमारी संस्कृति के प्रतिमानों को हम आधुनिकता के छोरों में इस प्रकार तिलांजलि नहीं दे सकते। यद्यपि समकालीन परिवेश के अनुरूप बाबा ने परम्परागत रूढ़ियों को नजरांदाज किया है लेकिन कहीं भी सामाजिक, सांस्कृतिक बंधनों को तोड़कर अतिवादिता का भाव नहीं दिखाते। व्यक्ति के दुःख–दर्द की सीमाओं का अतिक्रमण करने वाली शक्तियों का कड़े शब्दों में विरोध किया है लेकिन वे कभी भी, कहीं भी मानव के जीवन को संयमित बनाने वाले, नियमित करने वाले या दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि मानव को 'मानव' की परिभाषा में बाँधने वाले नियमों–उपनियमों, नीतियों, मूल्यों व व्यवस्थाओं के विपक्षी नहीं हैं। वे केवल जीवन को संकुचित, दब्बू, कमज़ोर बना देने वाले परम्परागत मूल्यों का निषेध करते हैं यथा–

"तनन–तनन तुन, तुन–तुन तुन–तुन
सुबह रामधुन, शाम रामधुन
संस्कृति के नूपुर बजते हैं रून–झुन रून–झुन
छींक मारने से भी इसमें हो जाता है भारी असगुन
साधारण जनता की खातिर प्राणपोषिणी
लेकिन कतिपय गोत्रपोषिणी
वैसे भी हो, यह संस्कृति तो नहीं चाहिए।"
(जयति–जयति जय सर्वमंगला, 'इस गुब्बारे की छाया में', पृ॰–85)

यह भी स्वीकार्य है कि परम्पराएँ जनता की शिराओं और धमनियों में रक्त की भांति प्रवाहमान रहती हैं और कालान्तर में रूढ़ियों में परिवर्तित हो जाती हैं लेकिन किसी भी हालत में जन–सामान्य को इनकी रूढ़िवादिता से बचाना चाहिए। अतः मूल्य–मान्यताएँ जीवन की नियमिता, उसकी संयमता का माध्यम हैं। इनको त्यागना नहीं बल्कि इनकी नीरसता से, इनके दारिद्रय से जन–सामान्य को बचाना ही आज की कविता व कवियों का मूल मंतव्य है।

8.आस्था और अनास्था का संकलप

समकालीन हिन्दी कविता में आस्था और अनास्था का संयुक्त चित्रण देखने को मिलता है। बदलते मानवीय मूल्यों से मानवीय संवेदनाएँ भी परिवर्तित हुई। दया, प्रेम, सहजता जैसी सुकोमल भावनाएँ एक छलावा मात्र हैं लेकिन फिर भी एक नये सूर्य के उद्‌य होने की आशा अभी तक जीवित है। इसी आशा और निष्ठा के स्वर को बाबा की कविताओं में प्रेरणा शक्ति के रूप में अलापा गया है। उन्होंने अगर विकृत युगीन परिवेश में मानव की दुःखद व्यथा सुनाई है तो साथ ही उसके जीवन में सुधार की आस्था का भाव भी प्रस्तुत किया है। जैसाकि डॉ॰ हरिचरण शर्मा कहते हैं– "नागार्जुन ने यहाँ युगीन विकृतियों और विषमताओं के धुएँ और गर्द–गुबार से पीड़ित मानवता के चित्र प्रस्तुत किये हैं, वहीं आस्था और संकल्पनिष्ठा के स्वरों को भी ओजस्वी शैली में प्रस्तुत किया है। उपेक्षितों और पीड़ितों का विश्वास बनकर आने वाला नागार्जुन उनकी शक्ति को आस्था में तथा भावना को संकल्पी स्वरों में गूँथता दिखाई देता है।" जैसे 'हटे दनुजदल, मिटे अमंगल' कविता में कवि ने लोक–मंगल की आस्था को व्यक्त किया है–

"पुलकित तन हो
मुलकित मन हो
सरस और सक्षम जीवन हो!
फिर न युद्ध हो
गति न रूद्ध हो
निर्भय–निरातंक यौवन हो!"
(हटे दनुजदल–मिटे अंमगल, 'नागार्जुन रचनावली–1', पृ॰–309)

इसी तरह कुछ अन्य कविताएँ जैसे 'तुम किशोर तुम तरूण', 'मेरी भी आभा है', इत्यादि में भी जन–कल्याण की चैतन्य अभिलाषाओं और अपनी मांगलिक भावनाओं को कवि ने सहृदय व्यक्त किया है। बाबा की कविताओं में आस्था केवल कहने मात्र में नहीं हैं बल्कि उनमें संकलपनिष्ठा भी है। वो जो कहते, बड़े पक्के इरादे से एक मज़बूत विचार के रूप में पेश करते हैं। जैसे 'लाल भवानी' कविता में इन्होंने बड़े सपाट शब्दों में नौकरशाही का भांडा फोड़कर सामान्य जन के मंगलमयी जीवन की कामना की है। देखिए उदाहरण–

"सेठों और जमीदारों को नहीं मिलेगी एक छदाम,
खेत खात दुकान मिले सरकार करेगी दखल तमाम।
खेत मज़दूरों और किसानों में जमीन बँट जाएगी,
नहीं किसी को कमर के लिए सिर पर बेकारी मँडरायेगी।
.....
.....
नौकरशाही यह रद्दी ढाँचा होगा चूरम–चूर
'सुजलां–सुफलां' के गाएँगे गीत प्रसन्न किसान–मजूर।"
(लाल भवानी, 'नागार्जुन रचनावली–1', पृ॰–100)

अतः कह सकते हैं कि दृढ़ आस्थावादी दृष्टिकोण वाले इस कवि की काव्यिक परिकल्पना में सर्वसुखदाय की भावना सर्वोन्नमुख है।

बाबा को पूरा विश्वास है कि उनके प्रेरणादायक संबोधनीय स्वरों को एक दिन जरूर हुँगारा मिलेगा। किसान, मज़दूर और कुली की मेहनत एक दिन जरूर रंग लायेगी। इस प्रकार उनकी कविता यहाँ एकतरफ निडरता, निर्भयता के आवरण में लिपटी है तो दूसरी तरफ युग–जीवन को बदलने और मानवीय मान्यताओं को दोबारा जीवन देने का विश्वास भी रखती है।

9.व्यक्ति मन की सहज अभिव्यक्ति

सठोत्तरी कविता की यह सबसे बड़ी उपलब्धि है कि उसमें आम आदमी की मनोदशा को सहज ही अभिव्यक्ति दी गई है। "औसत व्यक्ति की सहज–साधारण संवेदनाओं को इतने कलात्मक ढंग से उकेरा गया है कि स्वयं में अद्‌भुत असाधारण बन गयी हैं। इस उपभोक्तावादी संस्कृति की त्रासदियों को झेलते–झेलते मनुष्य की चेतना इतने खंडों में बंट गयी है कि उसे हर चीज़ से वितृष्णा–सी हो गयी है।" कहना न होगा कि संस्कृति के प्रति आम आदमी इतना ऊब चुका है, इतना तंग आ चुका है कि वे इसके खिलाफ बगावत करने पर उतर आया है; इसलिए वो अपनी मुक्ता हेतु काल्पनिक भगवान को साक्षी मानकर उसके आगे प्रार्थना करता है–

"चाहिए मुझको नहीं यह शांति
चाहिए संदेह, उलझन, भ्रांति
रहूँ मैं दिन–रात ही बेचैन
आग बरसाते रहें ये नैन
करूँ मैं उद्दडता के काम
लूँ न भ्रम से भी तुम्हारा नाम
करूँ जो कुछ, सो निडर निश्शंक
हो नहीं यमदूत का आंतक
घोर अपराधी–सदृश हो नत वदन निर्वाक
बाप दादों की तरह रगडूँ न मैं निज नाक–
मंदिरों की देहली पर पकड़ दोनों कान
हे हमारी कल्पना के पुत्र, हे भगवान।"
(कल्पना के पुत्र हे भगवान, 'नागार्जुन रचनांवली–1', पृ॰–74)

उपर्युक्त के अतिरिक्त बाबा ने कोमल–मार्मिक सद्‌भावनाओं का चित्रण भी किया है; जिनमें रिश्ते–नातों का उद्‌बोधन है। एक प्रवासी पिता की पीड़ा, एक प्रवासी पति की हृदयी वेदना इत्यादि सबको बाबा ने आंतरिक अनुभूतियों से प्रदर्शित किया है। देखिए वात्सल्य प्रेम की निम्नांकित उदाहरण–

"प्राइवेट बस का ड्राइवर है तो क्या हुआ
सात साल की बच्ची का पिता तो है!
सामने गीयर के ऊपर
हुक से लटका रखी है
काँच की चार चूड़ियाँ गुलाबी।"
(गुलाबी चुड़ियाँ, 'प्यासी पथराई आँखें', पृ॰–25)

अतः बाबा की कविता में जन–साधारण के मानसिक पटल की प्रत्येक उत्थल–पुत्थल का हृदयस्पर्शी विवरण मिलता है। उन्होंने व्यक्ति के गुम्फित भावों को उघाड़ निकालने की सफल चेष्टा की है।

10.जनवादी चेतना की विस्तृत व्यंजना

साठ के दशक की कविता में जनवादी चेतना का विशेष महत्व है। चूँकि ये कविता जन–साधारण के सुखद कल्याणमयी जीवन की कल्पना करती है, इसलिए भय–जनक विषय–विकृत परिस्थितियों में जन–सामान्य के शांत–खुशहाल जीवन की कल्पना जनवादी चेतना या कह सकते है सामूहिक संघर्ष से ही संभव है। कविवर नागार्जुन की कविता में भी विद्रोह, क्रांति और संघर्ष कूट–कूट कर भरा है। उनके मन–मानस पर बस एक ही बात उकरी हुई है–वर्गविहीन सामान्य व्यवस्थातंत्र। इसलिए बाबा ने जन–जन को इस मलीन परिवेश के विरूद्ध सामूहिक रूप में आवाज़ उठाने के लिए प्रेरित किया है। धोखाधड़ी, भ्रष्टाचार, पाखण्ड, स्वार्थपरता, लोभ, ईर्ष्या करने वालों से उन्हें सख्त नफरत है। वीरेंद्र मोहन के शब्दों– "नागार्जुन की कविता कभी बचाव की मुद्रा में खड़ी नहीं होती, यह संघर्ष के लिए प्रेरित करती है। कवि जन–सामान्य के जीवन को स्वीकार करता है। वह अतिमानव जैसी वैभव–विलासी जीवन–दृष्टि को भी स्वीकार करता है।" बाबा ने हर उस व्यवस्था, प्रवृति, परिवेश के खिलाफ उठ खड़े होने की बात कही है, जिसमें साधारण जीवन शोषित हो रहा है। जैसे तत्कालीन व्यवस्था के विरोध में कवि ने 'अन्न–पचीसी' कविता में भूखे क्रांतिकारी मज़दूरों को इस प्रकार प्रस्तुत किया है–

"कूच करेंगे भुक्खड़, थर्राएगी दुनिया सारी।
काम न आएँगे रत्ती–भर विधि–निर्षध सरकारी।
बंदूकों पर हावी होगी सैनिक की लाचारी।
सरे–आम कीड़े खाएँगे बेदम अत्याचारी।
कूच करेंगे भुक्खड़, थर्राएगी दुनिया सारी।"
(अन्न–पचीसी, 'पुरानी जूतियों का कोरस', पृ॰–56)

बाबा ने बिना किसी भी प्रकार के भय के नेताओं, धार्मिक ठेकेदारों, स्वार्थपर्ती अफसरों, अत्याचारी पाखण्डी साधुओं, सब पर कटु वाणी में तीक्षण बाण चलाये हैं क्योंकि यही सब व्यक्ति के जीवन को नरक बना रहे हैं। सब नीतियाँ, विधि–निषेध; इन्हीं के बनाये हुए हैं। अतः बाबा ने जनवादी चेतना को सरगर्म होने के लिए प्रेरित किया है।

11.प्रकृति का बहुविध चित्रण

समकालीन कविता में प्रकृति का बहुविध प्रकार से चित्रण हुआ है। कहीं वो मोहक–मादक रूप में प्रेयसी, कहीं रस–विभोर करने वाली कामिनी तो कहीं प्रतिष्ठित–प्रेरित रूप में जागृत करने वाली सहचरी है। नागार्जुन की कविताओं में भी यहाँ एक ओर प्रेम, वात्सल्य, करूणा का अजस्त्र स्त्रोत फूट पड़ा है, वहीं दूसरी ओर कवि द्वारा उकेरे गये तरह–तरह के प्राकृतिक चित्रण भी मन को मुग्ध कर लेते हैं। जनकवि होने के नाते उनकी प्राकृतिक संवेदना यहाँ एक तरफ विभिन्न स्त्रोतों के माध्यम से लोक–जीवन की नवचेतनापरक अगुआई करती है, वहीं दूसरी ओर इतने सरल–कोमल भावों से साधारण स्थितियों का चित्रण भी इस प्रकार करती है कि मानवीय हृदय तरल आवेगों में बह जाता है। वीरेन्द्र मोहन के अनुसार– "नागार्जुन की प्रकृति संघर्ष का पाठ पढ़ाती है। निरंतर संघर्ष की अगुआई करने के लिए टेर लगाती है और अपनी उन्मुक्ता तथा उल्लास से पूरे जन–समाज को आंदोलित कर देती है।"

बाबा की प्राकृतिक संवेदना में प्रत्येक कोमल से कोमल राग–तंतु, जो प्रकृति चित्रण का माध्यम बनता है; एक संघर्षशील, प्रेरणात्मक चित–चिंतन का स्त्रोत है। दूसरी तरफ प्रकृति रानी का लुभावना चित्र भी प्रस्तुत करते हैं। उनकी प्राकृतिक चेतना ग्राम्यत्व को लेकर उद्‌भूत होती है। गँवई संवेदना इनकी कविताओं की रीढ़ है। खेतों में लहलहाती फसलें, धान के मृदुल–हरित नवांकुर कवि के मन को बाँध लेते हैं। जामुन, कटहल, आम, बाग, उपवन, पोखर, तालाब, नदी–तट, वन, खेत, पेड़–पौधे इत्यादि सब कवि के हृदय को रमा लेते हैं। उनकी गँवई प्रकृति को डॉ॰ रतन कुमार पाण्डेय ने इस प्रकार शब्दों में बाँधा है– "नागार्जुन की दृष्टि गाँव की प्रकृति की सरल एवं सादगी भरी सुन्दरता की ओर प्राय उठती है। लोक जीवन की गहराईयों में परिवेश करके कवितायें अपनी आधार भूमि तलाशती हैं और उनकी संवेदनाओं में परिणित करती हैं।"

इसी तरह कवि वर्षा, बादल, पर्वत, वृक्ष, तालाब, पत्ते, ऋतुएँ, पक्षी, घास, जीव, चाँदनी, ओंस–कण, बर्फ आदि सब कवि मन को लुभाते हैं। बादलों की गड़गड़ाहट से कवि का हृदय उल्लास से भर जाता है और वह स्वंयमय गाने लगता है–

धिन धिन धा धमक–धमक
मेघ बजे
दामिनी यह गई दमक
मेघ बजे
दादुर का कंठ खुला
मेघ बजे
धरती का हृदय धुला
मेघ बजे।"
(मेघ बजे, 'नागार्जुन रचनावली–1' पृ॰–389)

श्वेत पर्वतों से गिरती हुई बर्फ भी किसानी संवेदना से जुड़कर ही वर्णित हुई है। वर्षा ऋतु को पावस रानी कहा है क्योंकि यह नये जीवन, नये उन्माद का संचार करती है। शिशिर ऋतु का 'सुन्दरी' का रूप 'हज़ार–हज़ार बाँहोवाली' है, जो सांसों में प्रलय की कयामत लेकर आती है–

"हिम दग्ध होंठो के प्राण शेषी चुम्बन
तन–मन पर लेप गये ज्वालामय चन्दन
एक–एक शिरा में सौ–सौ सुइयों की चुभन
अद्‌भुत यह भुज पाश, अद्‌भुत यह आलिंगन
तृण–तरू झुलस गए, पड़ा है ओंसमय तुषार
किया है महाकाल ने हिमानी का शृंगारं।"
(हज़ार–हज़ार बाँहोवाली शिशिर, 'नागार्जुन रचनावली–1', पृ॰–393)

अतएव कह सकते हैं कि बाबा की प्रकृति कहीं भावनात्मक स्तर पर, कहीं प्ररेणा–स्त्रोत के रूप में, कहीं रहस्यमय आख्यानों में तो कहीं उपदेशात्मक रूप में प्रस्तुत होती है। इसी तरह नागार्जुन की कविता विभिन्न स्तरों पर विभिन्न रूपों में प्रस्तुत हुई है।

अतः कविवर नागार्जुन के काव्य का समकालीन बोध के संदर्भ में अनुशीलन कर निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि काव्य संसार में उनकी अपनी ही एक अलग पहचान है। समकालीन कविता की सभी मान्यताओं–मर्यादाओं को इन्होंने अपनी कविता में बखूबी निभाया है। जन–सामान्य को मुक्ति व उसके कल्याणार्थ इन्होंने जिस उतेजनात्मक स्वर में आवाज़ उठाई है, जो अन्य कहीं दुर्लभ है। इसकी भाव–गरिमा, इनकी शैल्पिक चेतना इत्यादि सब में समकालीनता के दिग्दर्शन होते हैं। अतः वे समकालीन कविता के सशक्त हस्ताक्षर हैं। संदर्भ

Publish Research Article
International Level Multidisciplinary Research Journal
For All Subjects

Dear Sir/Mam,

We invite unpublished research paper.Summary of Research Project,Theses,Books and Books Review of publication,you will be pleased to know that our journals are

Associated and Indexed,India

- International Scientific Journal Consortium Scientific
- OPEN J-GATE

Associated and Indexed,USA

- DOAJ
- Index Copernicus
- Publication Index
- Academic Journal Database
- Contemporary Research Index
- Academic Paper Databse
- Digital Journals Database
- Current Index to Scholarly Journals
- Elite Scientific Journal Archive
- Directory Of Academic Resources
- Scholar Journal Index
- Recent Science Index
- Scientific Resources Database

Review Of Research Journal
258/34 Raviwar Peth Solapur-413005,Maharashtra
Contact-9595359435
E-Mail-ayisrj@yahoo.in/ayisrj2011@gmail.com
Website : www.isrj.net